पंजाबी सूफी संगीत परिच्यात्मक अध्ययन

डॉ. हरजस कौर
सह आचार्य, राजकीय महाविद्यालय, रोपड़

हिन्दुस्तान में सातवीं आठवीं सदी के बाद मुसलमान हमलावर पहले पंजाब में आए और फिर सारे भारत में धीरे–धीरे फैलने लगे। मुसलमानों के आगमन के साथ सूफी फकीर अपना सूफी दर्शन ले कर आए। अब्दुल माजिद के अनुसार, 'मुसलामानें में शुरू से ही एक गिरोह ऐसा मौजूद है जिसने सभी दुनियावी उद्देश्य से दृष्टि हटा कर यादि खुदा (खुदा की याद) जिकरि इलाही (इलाही के जिकर) को अपना परम लक्ष्य बना लिया और सिदको सफा (सच्चाई और पवित्रता) सलूको इहसान (नेकी और भलाई) के भिन्न–भिन्न विधियों पर अमल किया। आरम्भ में यह गिरोह कई नाम से जाना जाता रहा पर समय बीत जाने पर इसको (गरोहि–सूफीआं) कहने लग पढ़े और इस गिरोह के सलूक सलीके या मर्यादा को 'तसवुफ' कहा जाने लगा।[1]

सूफी मत इस्लामिक शरा के बंधन की कटड़ता का धारणीय नहीं था। सूफीयों ने अपने मत के प्रचार लिए 'सूफीआना कलाम' की रचना की। इन्होंने परमात्मा को प्रियतमा का रूप दिया और रब्बी प्रेम जाहिर करने लिए कावि और संगीत को माध्यम बनाया। सूफीयों ने अपने पूर्वजों से चली आ रही कविक परंपरा को अपनाते हुए भारतीय संगीत का प्रयोग किया। सूफी मत को सूफी कवि और संगीत द्वारा सूफीयाना अंदाज में प्रस्तुति ही 'सूफी संगीत' है। सूफीयों ने अपनी वाणी की सांगीतिक प्रस्तुति के लिए निबद्ध और अनिबद्ध दोनों प्रकार की शैलियों का प्रयोग किया। निबद्ध गायन शैलियां जो विशिष्ट ताल के नियमों से बंधी होती हैं। सूफी संगीत की निबद्ध गायन शैलियां काफी और कव्वाली हैं जो संगीतिक संकेत राग, रहाउ, अंक सहित हैं। सूफी संगीत परंपरा में प्रचलित काफी गायन शैली पर भक्ति संगीत की पद गायन शैली का बहुत प्रभाव है मुस्लिम कव्वली के अंदाज से इसमें बार–बार दुहराव किया जाता है पर काफी शैली अपनी प्रकृति और सूफीयाना अंदाज से भारतीय संगीत की विभिन्न गायन शैलियों से अपना नया रूप रखती हैं। सूफी परम्परा अधीन शेख फरीद, शाह हुसैन, बुले शाह, शाह शरफ, शाह मुराद आदि ने रब्बी ईश्क का जिकर किया। सूफी कवि की भाषा में सरलता है भाषा प्रति उद्वार दृष्टिकोण सूफीयों के मुख्य उद्देश्य भावों के संचार करने में सहायक है।

सूफी परंपरा अनुसार परमात्मा सर्वशक्तिमान और सर्वव्यापक है। संसार का पासारा उसके हुस्न का जलवा है और आपा भाव मिटा कर, दुख–सुख से ऊँचा उठ कर इश्क, प्रेम राहीं उसे मिलाप हो सकता है। परमात्मा के इलावा सभी कुछ छोड़ देना सूफी वाद है। सूफी धरा इस्लाम धर्म को प्रचार

और पासार करने में ही सफल नहीं हुई बल्कि भारत में सूफी लहर का हर मन को प्रिय होने का नतीजा है। सूफी फकीर संत जगह–जगह पर जा कर सूफी मत का प्रचार करते। ये जहाँ भी जाते वहीं से कुछ शागिर्द भी साथ में मिल जाते और प्रचार के लिए साथ ही चल पड़ते । इस तरह सूफी मत का प्रचार दिन ब दिन बढ़ने लगा। सूफी मत शरा के मुद्ई, कटड़ता का धारणी था पर समय पा कर इल्म से इश्क को तरजीह दी जाने लगी धार्मिक मर्यादा की जगह लौकिक जीवन यानि सामाजिक जीवन की तरफ झुकाव होने लगा। सूफी कवि लोक बहिरां और किस्सा में प्रवेश कर गया। सूफी सम्प्रदाय में शार्गिदों की तरफ से या कटड़ता की बगावत से नई सम्प्रदायों ने जन्म लिया। सूफी चिंतक के दो रूप उल्मा चाहिर और उल्मा ए बातन हो गए। उल्मा जाहिर जो सुन्नत और शरीयत ऊपर कायम थे और दूसरी तरफ उल्मा ए बातन शरीयत की कटड़ता से हट कर ज्ञान से आत्म ज्ञान और आत्म दर्शन के अनुभव की प्राप्ति पर जोर देते थे। शरा के मुद्ई और कटड़ता के धारणी चिश्ती, कादरीया, नकशबं दीया आदि संपर्दायों ने जन्म लिया। इसके विपरीत कटड़ता के विरोध, में सुहरवरदी, कलंदरीया, मलमाती, हुसैनशाही आदि सम्प्रदाय हुई इसके साथ ही उबैसी, मदारी, शतारी आदि छोटी– छोटी सम्प्रदाय के सूफीयों ने भी सूफी धर्म का प्रचार किया । सुहागीआ परम्परा में सूफी साधक जनाना पहरावे में रह कर अपने आप को परमात्मा की पत्नी मानते थे। सूफी मत के प्रचार में सूफी धारा बहुत जोर पकड़ रही थी। इस लहर में कई महान सूफी संत पैदा हुए। हुसैनशाही सम्प्रदाय के महान संत थे– साई मियां मीर, जिन को समय के हाकम से लेकर हर विचार के लोग अपना मुर्शद मानते थे। आप सर्व प्रिय और लोक प्रिय संत थे। गुरू साहिब ने इनके ही पवित्र कर–कमलों द्वारा श्री हरिमंदिर साहिब की नींव रखवाई थी।[2] सम्प्रदाय चाहे कोई भी हो यह तो तय है कि सूफीयों को हर तरफ परमात्मा का नूर ही नजर आता है। इसी अभेदता में उन्होंने संगीतक रमज पकड़ी और रचनाओं में रब्बी इश्क की प्रबल भावना प्रतीत होती है और सूफी रहस्यमई अनुभव की झलक दिखाई देती है।

काफी संगीत की प्रमुख और केन्द्रीय गायन शैली है जो बाद में भारतीय शास्त्रीय संगीत में भी प्रचलित हुई। काफी पंजाबी कविता का वह रूप है जिसमें मुसलमान सूफी भक्त अपने अध्यात्मक अनुभव को व्यान करते हैं।[3] काफी का अर्थ है बार–बार गायन करना। एक टेक पर सूफी उस का बार–बार गायन करते हैं और उन के पीछे सारी महफिल गाती है।[4] काफी, स्वतंत्र गायन शैली के तौर पर प्रचार में थी और उसको उप–शास्त्रीय शैली ठुमरी, भजन की तरह भी गायन किया जाता है। काफी का गायन विशेष तालों में किया जाता है। यह अधिकतर कहरवा और रूपक ताल में ही गाई जाती है। आजकल दादरा ताल में भी काफी सुनने को मिलती है। जिस कहरवा और रूपक

तालों में यह गाई जाती रही है उसके बोल आज के प्रचलित कहरवा और रूपक ताल से भिन्न हैं।[5] सूफी संगीतकारों ने सबसे ज्यादा काफी शैली का प्रयोग किया। सूफी कवियों ने काफी अन्तर्गत सरल भाषा में भक्ति भावना, रब्बी प्रेम और मस्ती को दर्शाया है। सूफी रचनाओं में भाव को दृढ़ करवाने के लिए पंजाबी जन जीवन से सम्बन्धित अलंकार भी मिलते हैं काफी को खुले रूप में प्रयोग किया गया है। उदाहरण के लिए कवि बुल्लेशाह की बिलावल, हिंडोल, झिंझोटी और भैरवी राग की काफियों में तीखे भाव चित्र नजर आते हैं।[6] सूफीयों की पसंदीदा काफी शैली को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि काफी सूफी संगीत की मुख्य शैली रहीं होगी।

कव्वाली भी सूफी संगीत की विशिष्ट गायन शैली है। इसका विशेष लोगों द्वारा दरगाह पर गायन किया जाता है। कव्वाली का मूल अरबी शब्द 'कौल' है जिसके अर्थ हैं बचन, सखून, कथन, बोल आदि। ईरानी साहित में कौल से दो बैंती, चार–बैती या तराना के भाव भी लिए जाते हैं।[7] इस तरह ईरानी साहित में 'रूबाई' भी कौल है इस लिए जिन रूबाईयों का गायन करने लिए रचना की गई उनको कौल कहा गया। सूफी संगीत के अन्तर्गत गायक को 'कव्वाल' का नाम दिया गया है। इन कव्वालों द्वारा गायन किये गए गीतों को कव्वाली कहा गया क्योंकि कव्वाली का अपना कोई सहित्क रूप नहीं है। इन कव्वालों की गायन शैली में गायन की हुई रचना ही कव्वाली है उदाहरण के तौर पर काफी शैली को कव्वाल शैली में गायन करने पर काफी न रह कर कव्वाली कहलाती हैं प्रसिद्ध सूफी गुलाम फरीद जी अक्सर अपने साथ कव्वाल बरकत रखते थे जो आपकी काफियों को निर्धारित राग में कव्वाली के रूप में गायन करता था। कव्वाली का सामूहिक रूप में विशिष्ट गायकों द्वारा गायन किया जाता है। इसमें दो मुख्य कलाकर होते हैं और शेष तालियों की थाप के साथ इनके द्वारा उच्चारण की गई पंक्तियों, पदों का अनुकरण करते हैं। कव्वाली के भाव को स्पष्ट करने के लिए जहाँ स्थाई की तुक का बार–बार गायन किया जाता है वहाँ अंतरे की तुकों में विषय से सम्बन्धित श्लोक और दोहड़ियों का भी गायन किया जाता है।

सूफीयों ने अपनी रचनाओं के लिए जहाँ निबद्ध गायन शैली काफी/कव्वाली का प्रयोग किया वहाँ अनिबद्ध गायन शैलियाँ जो ताल के बन्धन से आजाद होती हैं यानि सीहरफी, दोहड़े और श्लोक गायन शैली में भी सूफी साहित और सूफी संगीत का प्रचार किया। सीहरफी फारसी भाषा का शब्द है जो अरबी वर्णमाला के तीस अक्षरों पर आधारित है। पंजाबी, हिन्दी में पट्टी, बावन अखरी की तरह सीहरफी वर्णमाला के अक्षरों के अनुरूप कावि रचना का पहला अक्षर लिया जाता है फिर इसी का क्रमवार इन अक्षरों को ले कर कवि रचना होती है। सीहरफी में प्रयोग की गई हरकत से टप्पा शैली और लम्बी हेक से पंजाबी लोक संगीत की झलक मिलती है। सीहरफी का स्वतंत्र गायन के साथ

सहायक के तौर पर भी प्रयोग किया जाता है। गायन शैली के रूप में सीहरफी हर शैली की मूल धुन में खो कर अपना स्वरूप धारण कर लेती है। सूफी धारा की रचना दोहड़ा शैली की भी बहुत महानता है । दोहड़ा रचनाओं को तो इतनी प्रसिद्धी मिली है कि कई दोहड़े मुहावरे के तौर पर भी जाने जाते हैं जैसे कि

– बुलिआ सब मजाजी पौढ़ीआं
तू हाल हकीकत वेख ।।
– कुपे विच रोड़ खड़कदे
मूरख आपे बोले कउण ।।

दोहड़ा चार तुकों का पद होता है और प्रत्येक दोहड़ा दो शेयर का धारणी होता है। सूफी संगीत में दोहड़ा का सीहरफी जैसे दो तरह से गायन किया जाता है– एक स्वतंत्र रूप में दूसरा सहायक के तौर पर प्रयोग किया जाता है। श्लोक में किसी महान व्यक्ति की प्रशंसा या गुणगान किये जाते हैं। श्लोक का गायन बिना साज के किया जाता है। सूफी संगीत में श्लोक का गायन स्वतंत्र रूप में किया जाता है और साथ ही सीहरफी, दोहड़े की तरह काफी और कव्वाली शैली में सहायक के तौर पर किया जाता है।

सूफी त्योहारों मुहरम आदि और उरसा के समय मजार, मकबरे पर सूफी साधक मुजरा नाच करते हैं और सूफी गायक सूफी विचारधारा को सूफीआना अंदाज में सूफी संगीत की प्रस्तुति करते हैं। उक्त से स्पष्ट है कि भारतीय अध्यात्मक संगीत परम्परा में सूफी संगीत ने महान योगदान दे कर अपनी मौलिक पहचान बना कर विलक्षण स्थान ग्रहण किया है।

सहायक पुस्तकें

1. पंजाबी सूफी साहित संदर्भ कोश, (संपा. गुरदेव सिंह) पंना–194
2. कुलवीर सिंह कांग, पंजाब दी सुफी सम्प्रदाय पंजाबी दुनियां, नवम्वर–दिसम्ब्र, पंना–72
3. भोगल, प्यारा सिंह, साहित्क निबंध, पंना–130,
4. पदम, प्यारा सिंह, पंजाबी साहित की रूप रेखा, पंना–105
5. पैंतल, गीता, पंजाब की संगीत परंपरा, पंना–98
6. सीता राम बाहरी, बुले शाह–एक अध्ययन, पंजाबी दुनियाँ, नवम्बर–दिसम्बर 1964, पंना–185
7. पंजाबी साहित कोश (भाग पहला), पंना–219